International Journal of Applied Research 2020; 6(9): 486-489

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2020; 6(9): 486-489
www.allresearchjournal.com
Received: 05-07-2020
Accepted: 27-08-2020

Jyoti
Assistant Professor,
Department of Sanskrit,
Janki Devi Memorial College,
New Delhi, India

Corresponding Author:
Jyoti
Assistant Professor,
Department of Sanskrit,
Janki Devi Memorial College,
New Delhi, India

मुग्धबोध और अष्टाध्यायी के कृत् प्रत्ययों में अनुबन्ध विज्ञान

Jyoti

प्रस्तावना

सम्पूर्ण संसार में मानव के समस्त कार्यकलाप भाषा से व्याप्त और परिचालित हैं। भाषा को परिमार्जित और संशोधित करने का सर्वोत्तम एवं सर्वमान्य साधन है– व्याकरण। संस्कृत भाषा के साधुत्व व असाधुत्व प्रतिपादन में पाणिनि विरचित अष्टाध्यायी की महती भूमिका है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी में भाषा की सबसे छोटी इकाई वर्ण से प्रारंभ करते हुए वर्ण–संयोजन, पद विधान, शब्द एवं वाक्य संरचना तथा अर्थ विश्लेषण का अत्यंत वैज्ञानिकता से समाहार किया है। पाणिनि की अनुबंध योजना उनकी सूक्ष्म वैज्ञानिक दृष्टि का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। पाणिनीय व्याकरणशास्त्र में अनुबन्धों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनुबन्ध वह वर्ण है जो प्रकृति, प्रत्यय, आगम एवं आदेश के साथ जुड़े होते हैं तथा व्याकरण में गुण–वृद्धिविधान, गुण–निषेध, सम्प्रसारण, अनुनासिक, लोप, आदेश, आगम, विकरण, स्वरादिविधान इत्यादि अनेक विशेष कार्यों का विधान करने हेतु प्रयुक्त होते हैं।

पाणिनि की अष्टाध्यायी की लाघवता का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व अनुबन्धों की योजना है। पाणिनि ने अनुबन्ध की कोई परिभाषा तो उपस्थित नहीं की है किन्तु यत्र तत्र वर्णों की इत् संज्ञा का विधान किया है।[1] तथा उन सभी इत्संज्ञक वर्णों का लोप किया है।[2] जिससे स्पष्ट है अनुबन्ध को लगाकर तथा उनका लोप करके पाणिनि द्वारा भाषा के नियमों को अत्यन्त वैज्ञानिक रीति से समायोजित किया है।

पाणिनि द्वारा अच् एवं हल् दोनों का अनुबन्ध के रूप में प्रयोग किया गया है और उन्होंने अष्टाध्यायी के लगभग सभी प्रकरणों में अनुबन्धों की व्यवस्था की है। जैसे– प्रत्ययों में सुप्, तिङ्, धात्वंश, कृत्, तद्धित, स्त्री प्रत्ययों, आदेशों, आगम, धातु तथा विकरण इन सभी की व्यवस्था करते हुए अनुबन्धों का प्रयोग अत्यन्त वैज्ञानिक रीति से किया है। वास्तव में अनुबन्धों के प्रयोग के बिना व्याकरण की प्रक्रिया सम्भव ही नहीं हो सकती थी। इन अनुबन्धों के माध्यम से व्याकरणशास्त्र में अनेक प्रयोजनों की सिद्धि हुई है। क्योंकि अनुबन्ध के माध्यम से ही प्रकृति एवं प्रत्यय आदि में अलग–अलग पहचान करना सरल हो पाया है। तथा अर्थ वैषम्य एवं रचना वैषम्य की प्रक्रिया सम्भव हो सकी। समान स्वरूप वाले प्रत्यय भी अनुबन्ध योजना के कारण ही पद निर्माण की दृष्टि से भिन्न–भिन्न अर्थों की उपस्थिति कराते हैं। यथा कृत् प्रत्ययों के अन्तर्गत आने वाले यत् एवं ण्यत् प्रत्यय अनुबन्ध लोप के उपरान्त स्वरूप की दृष्टि से समान है परन्तु अनुबन्ध प्रयोजन से भिन्न–भिन्न रूपों की सिद्धि करते हैं।

पाणिनि एवं अन्य वैयाकरणों ने लाघव हेतु ही नहीं अपितु भाषा को वैज्ञानिक व्यवस्था प्रदान करने हेतु भी अनुबन्ध को अत्यन्त उपयोगी मानते हुए इनका प्रयोग अपने व्याकरण ग्रन्थों में किया है। परवर्ती काल में संस्कृत भाषा को आधारित करके अन्य व्याकरण सम्प्रदायों की रचना की गई। इन व्याकरणों का मुख्य उद्देश्य सरलता का प्रतिपादन करना तो था ही परन्तु साथ–साथ युगानुकूल भाषा में आए अनेक परितर्वन एवं परिवर्धनों पर दृष्टिपात करना भी था क्योंकि भाषा एक सतत परिवर्तनशील ईकाई है और उस परिवर्तन के साथ सामञ्जस्य उपस्थापित करने हेतु तत् तत् समय पर रचे गये अन्य व्याकरण ग्रन्थ भी विशेष महत्त्व का प्रतिपादन करते हैं। पाणिनिपरवर्ती काल में रचे गये अनेक व्याकरण सम्प्रदायों में (13वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में) वोपदेव विरचित मुग्धबोध व्याकरण का विशेष महत्त्व है क्योंकि पूर्ववर्ती सभी व्याकरणों की अपेक्षा वोपेदव ने मुग्धबोध को संक्षिप्ततम रूप दिया है। जिसमें कुल सूत्र संज्ञा 1184 है। मुग्धबोध में वोपदेव ने सूत्र संख्या 965 से 1184 तक में केवल लौकिक भाषापरक 103 कृत् प्रत्ययों का समावेश किया पर आचार्य पाणिनि ने अष्टाध्यायी में

---

1 पा.अ. – 1/3/2 से 1/3/8

2 1/3/9

तृतीय अध्याय के प्रथम पाद से तृतीय पाद तक (3/1/91 से 3/3/75) 124 कृत प्रत्ययों का विधान किया है जिनमें 23 वैदिक प्रत्यय है। दोनों ही वैयाकरणों नें अनुबंध की इस वैज्ञानिक पद्धति का आश्रय लेते हुए प्रत्ययों के स्वरूप में समानता होते हुए भी कैसे अनेक अर्थों का प्रतिपादन किया है, इसी वैशिष्ट्य को दर्शाने के लिए मेरे द्वारा अष्टाध्यायी एवं मुग्धबोध व्याकरणों के कृत् प्रत्ययों में प्रयुक्त अनुबन्धों का वर्णन इस प्रस्तुत पत्र में उपस्थापित किया गया है।

अनुबन्ध वैशिष्ट्य

आचार्य पाणिनि ने कार्य विशेष के उद्देश्य से अपने शास्त्र में अनुबन्धों की व्यवस्था की है। धातुओं और प्रत्ययों में इन अनुबन्धों को लगाया है तथा लगाकर इनको लोप कर दिया है, लोप करने का प्रयोजन यह है कि ये निमित्त का कार्य करते हैं। अर्थात् अनुबन्ध ही शब्द बनाते समय हमारे लिए निर्देशक होते हैं। ये ही बतलाते हैं कि किस प्रत्यय के लगने पर हमें कौन सा कार्य करना है। अनुबन्ध के सन्दर्भ में महाभाष्यकार पतञ्जलि का कथन है–

"अनुबन्धकरणार्थश्च वर्णानामुपदेशः, अनुबन्धानासंङ्क्ष्यामिति। न ह्यनुपदिश्च वर्णननुबन्धाः शक्या आसङ्क्तुम।" (म.भा., पस्पशा. 1.1) जिस प्रकार पाणिनि ने अनुबन्धों की इत्संज्ञा और लोप किसी विशेष प्रयोजन से किया है। उसी प्रकार आचार्य वोपेदव ने भी कार्यार्थ ही प्रयुक्त वर्ण की इत् संज्ञा की है।[3] पाणिनि के मत में अनुबन्ध की योजना गुण, वृद्धि, आगम आदि विशेष कार्य के निमित्त की गई है। वोपदेव भी इसी मार्ग का समर्थन करते हुए आगम, आदेश, गुण, वृद्धि कार्यार्थ ही इत् वर्णो का प्रयोग करते हैं। व्याकरण शास्त्र में भी अनुबन्ध शब्द का लक्षण करते हुए कहा है–

इत्संज्ञकत्वमनुबन्धत्त्वम्। इत्संज्ञायोग्यत्वमनुबधत्त्वम्।

सामान्यतः अनुबन्ध का कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है परन्तु कई स्थलों पर अनुबन्ध का कार्य विशेष से सम्बंध नहीं होता। ऐसे स्थलों पर अनुबन्ध या तो उच्चारणार्थ होता है अथवा स्पष्टता के लिए होता है।

आचार्य पाणिनि ने अनुबन्धों के इत्संज्ञा सम्बन्धी[4] कुछ सूत्रों का विधान किया तत्पश्चात् 'तस्य लोपः' से अनुबन्ध लोप दर्शाकर अनेक सूत्रों के माध्यम से कार्यों का विधान किया है। किन्तु मुग्धबोध में इत् संज्ञक वर्णों का निर्देश वृत्ति में ही है सूत्रों द्वारा इनका पृथक् निर्देश नहीं किया गया। मुग्धबोध में प्रयुक्त अधिकांश अनुबन्धों का स्वरूप तथा प्रयोजन पाणिनि के समान ही है। लेकिन कई स्थलों पर दोनों में पर्याप्त भिन्नता भी है, जिसका कारण है वोपदेवीय शास्त्र में वैदिक प्रक्रिया का अभाव। यहाँ दोनों के कृत् प्रत्ययगत अनुबन्धों का तुलनात्मक प्रयोजन निर्दिष्ट है–

इ अनुबन्ध

आचार्य पाणिनि ने कृत् प्रत्ययों[5] ने इ अनुबन्ध केवल उच्चारण सौकर्य के लिए प्रयुक्त किया है। मुग्धबोध[6] में इ अनुबन्ध प्रयुक्त होने पर भी इस अनुबन्ध का प्रयोजन वोपदेव ने स्पष्ट नहीं किया। प्रयोग से इस अनुबन्ध को भी उच्चारण सौकर्य के लिए ही माना जा सकता है।

3 मु. – इत्कृते (4)
4 हलन्त्यम्, आदिर्ञिटुडवः, चुटू, लशक्वतद्धिते, षः प्रत्ययस्य
5 पा.अ. – 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः' (3/1/34)
6 मु. – णिनि, 660

ऋ अनुबन्ध

पाणिनि के शतृ प्रत्यय में ऋ अनुबन्ध प्रयोजन **'उगितश्च'**[7] सूत्र से ङीप् का विधान करना है। और वोपदेव के शतृ व स्यतृ प्रत्ययों में ऋ अनुबन्ध का प्रयोजन स्त्री विवक्षा में **'ष्द्रिनञचवाहनादादेरीप्'**[8] सूत्र से ईप का विधान करना है।

क् अनुबन्ध

पाणिनि के क्यप्, क, कप्, टक्, सक्, कञ्, क्वनिप् इत्यादि प्रत्ययों में क् अनुबन्ध देखा जाता है। इनमें कित् का प्रयोजन गुणवृद्धि निषेध[9], सम्प्रसारण[10], आ लोप[11], अनुनासिक लोप[12], उपधा लोप[13] बताया है।

और वोपदेव के मत में भी कित् प्रयोजन पाणिनि के समान ही है। मुग्धबोध के सक्, यक्, क्यप् आदि अनेक कृत् प्रत्ययों में क् अनुबन्ध प्राप्त होता है। जिसका मुख्य प्रयोजन गुण वृद्धि[14] निषेध करना है।

ख् अनुबन्ध

अष्टाध्यायी में खश्, खच्, ख्युन्, खल्, खुकञ् इत्यादि कृत् प्रत्ययों में ख् इत् प्राप्त होता है जिसका मुख्य प्रयोजन मुम् आगम है।[15] मुग्धबोध के खि, खश्, खिष्णु, खुकञ् खल् इत्यादि में ख् का इत्करण वोपदेव ने भी मन् आगम के निमित्त किया है।[16] जो पाणिनि से साम्य रखता है।

ग् अनुबन्ध

पाणिनि ने ग्स्नु प्रत्यय में गकार अनुबन्ध रखा है। जिसका फल 'ग्क्ङिति च' से गुण तथा वृद्धि निषेध करना है। आचार्य वोपदेव के प्रत्ययों में ग् अनुबन्ध का अीाव है।

घ् अनुबन्ध

पाणिनि के घञ्, घुरच्, घिनुण् इत्यादि प्रत्ययों में घित् प्रयोजन 'चजोः कुः घिण्ण्यतोः' से कुत्वादि करना है। मुग्धबोध में भी घ्यण् प्रत्यय को छोड़कर अन्य कृत् प्रत्ययों में घित्करण का उद्देश्य च् ज् को क् ग् आदेश करना है।[17] इस अनुबन्ध में वोपदेव का मत पाणिनीय मत के समान है।

ङ् अनुबन्ध

पाणिनि ने अङ्, नङ्, नजिङ् प्रत्ययों में ङ् अनुबन्ध रखा है जिसका फल 'क्ङिति च' से गुण वृद्धि निषेध करना है। तथा छ् को श् आदेश करना है।[18] वोपदेव ङनज्, नङ्, ङ प्रत्ययों के परे रहते ङ् अनुबन्ध के कारण गुण का निषेध मानते हैं।[19] यहां भी वोपदेव पाणिनि से साम्य रखते हैं।

च् अनुबन्ध

अथुच्, आलुच्, अच्, इष्णुच्, कुरच् इत्यादि प्रत्ययों में पाणिनि ने च् अनुबन्ध माना है। जिसका प्रयोजन वैदिक स्वर की पहचान

7 पा.अ. – 4/1/6
8 मु. – 257
9 पा.अ. – क्ङिति च। (1/1/5)
10 पा.अ. – वचिस्वपि यजादीनां किति। (6/2/5)
11 पा.अ. – आतो लोप इटि च। (6/4/64)
12 पा.अ. – अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति। (6/4/24)
13 पा.अ. – गम हन् जनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि। (6/4/98)
14 मु. – णुर्घङश्चक्ङिति। (542)
15 पा.अ. – अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् (6/3/67)
16 मु. – खित्यव्याजरुषो (1014)
17 मु. – चजोः कगौ घिण्यति (972)
18 पा.अ. – 'छ्वोशूड्नुनासिके च।' (6/4/9)
19 मु. – णुर्घङश्चाक्ङिति (542)

है। 'चितः'[20] सूत्र से चित्प्रत्ययान्त आन्तोदात्त हो जाता है। जबकि वोपेदव के मुग्धबोध में वैदिक प्रक्रिया का अभाव होने के कारण वहां च् अनुबन्ध का प्रयोजन कृत् प्रत्ययों में पद के अव्ययत्व[21] का निर्देश करना है। जो विच्, चतुम्, क्त्वाच्, चणम् इत्यादि प्रत्ययों में प्राप्त होता है।

ञ् अनुबन्ध

पाणिनि के इञ्, उकञ्, कञ् इत्यादि कृत् प्रत्ययों में ञित् का फल 'अचोञ्णिति' से वृद्धि करना है। यहाँ वोपदेव का मत पाणिनि से साम्य रखता है। मुग्धबोध के खुकञ, ञुक् इत्यादि में ञ् अनुबन्ध प्राप्त होता है। जिसके परे रहते धातु के अन्त्य इच् तथा उपधा के अकार की वृद्धि का निर्देश होता है।[22]

ट् अनुबन्ध

मुग्धबोध के णनट्, टक्, खनट्, विट्, अनट् इत्यादि प्रत्ययों में ट् अनुबन्ध पाणिनि के टित् प्रयोजन के समान ही स्त्रीत्व की विवक्षा में ईष् का विधान करना है।[23] पाणिनि भी टिदन्त से ङीप् का विधान करते हैं।[24]

ड् अनुबन्ध

पाणिनि ने अपने शास्त्र में ड् अनुबन्ध डु, डर्, डस् इत्यादि प्रत्ययों में माना है जिसका प्रयोजन प्रकृति के टिलोप का निर्देश[25] करना है वोपदेव भी टिलोप के उद्देश्य से कृत् प्रत्ययों में डित्करण का विधान करते हैं।[26] इस मत में भी वोपदेव पाणिनि से साम्य रखते हैं।

ण् अनुबन्ध

मुग्धबोध में यण्, णक, ण, णनट्, विण्, णिन्, ध्यण्, णन्, णि इत्यादि प्रत्ययों में ण् अनुबन्ध का प्रयोजन अन्त्य इच् तथा उङ् (उपधा) की वृद्धि करना है।[27] जिसमें वह पाणिनि से साम्य रखते हैं। पाणिनि भी ण्वुल्, अण्, इनुण्, घिनुण्, ण्यत् इत्यादि प्रत्ययों में णित् विधान कहीं 'अचोञ्णिति' से वृद्धि तथा कहीं अत उपधायाः से वृद्धि करने के लिए तथा कहीं 'आतोयुक्चिण्कृतोः' से युक् आगम के लिए करते हैं।

त् अनुबन्ध

आचार्य पाणिनि तव्यत्, यत्, ण्यत् आदि कृत् प्रत्ययों में त् अनुबन्ध वैदिक प्रयोजन से मानते हैं इसका फल 'तित्स्वरितम्' सूत्र से तित् प्रत्यय का अन्तोदात्त होना है। वोपदेव ने त्[28] अनुबन्ध तो माना है किन्तु इसका प्रयोजन कहीं स्पष्ट नहीं किया है। इसका कारण मुग्धबोध में वैदिक प्रक्रिया का अभाव हो सकता है।

न् अनुबन्ध

पाणिनि का नित् प्रयोजन वैदिक भाषा की दृष्टि से उपयोगी है।[29] जो अध्यैन्, इन्, खुन्, अतृन्, थकन् इत्यादि प्रत्ययों में प्राप्त होता है। वोपदेवीय शास्त्र में वैदिकी प्रक्रिया का अभाव होने से प्रत्ययगत अनुबन्ध नहीं है। किन्तु आगम में न् अनुबन्ध का प्रयोग मिलता है।

प् अनुबन्ध

पाणिनीय कृत् प्रकरण में क्यप्, अप्, क्वरप्, क्विप्, कप् इत्यादि प्रत्ययों में प् अनुबन्ध प्राप्त होता है जिसका फल 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से तुक् आगम है। तथा वैदिक दृष्टि से 'अनुदात्तौ सुप्पितौ' से प्रत्यय में अनुदात का विधान करना है। वोपदेव ने पित् करना पूर्ववर्ती वैयाकरणों के अनुकरण से माना है। क्वनिप्, क्विप्, वनिप्, क्वरप् इत्यादि कृत् प्रत्ययों में प् अनुबन्ध पाणिनि के समान ही ह्रस्व से परे तन्[30] आगम निर्देश के लिए है।

म् अनुबन्ध

म् अनुबन्ध का प्रयोजन पाणिनि और वोपदेव की दृष्टि से समान है। दोनों ही आगम का निर्देश करने के लिए म् अनुबन्ध मानते हैं। आचार्य पाणिनि नुम् आगम का विधान करने के लिए 'मिदचोऽन्त्याद् परः' सूत्र से अन्तिम अच् से परे नुम् आगम करते हैं और वोपदेव म् अनुबन्ध युक्त आगम[31] निर्दिष्ट पद के आदि में प्रयुक्त करते हैं।

र् अनुबन्ध

वोपदेवीय मुग्धबोध के प्रत्ययों में र् अनुबन्ध का अभाव है किन्तु पाणिनि इस अनुबन्ध का वैदिक दृष्टि के कारण विधान करते हैं। पाणिनि के अनीयर्, केलिमर् में र् अनुबन्ध 'उपोत्तमम् रिति' सूत्र से उपोतम वर्ण को उदात्त करने के प्रयोजन से लिया है।

ल् अनुबन्ध

पाणिनि ने णमुल्, ण्वुल्, कमुल् इत्यादि प्रत्ययों में ल् अनुबन्ध माना है। इसका प्रयोजन 'लिति' से पूर्व को उदात्त करना है। मुग्धबोध में अल् तथा खल् कृत् प्रत्ययों में प्राप्त लकारानुबन्ध का प्रयोजन वोपदेव ने स्पष्ट नहीं किया है। पूर्वानुकरण के आधार पर ही वोपदेव का यह अनुबन्ध माना जा सकता है।

श् अनुबन्ध

पाणिनि के चानश्, शतृ, खश् इत्यादि प्रत्ययों में शित् प्रयोजन सार्वधातुक संज्ञा[32] तथा शपादि विकरण करना है। वोपदेव का प्रयोजन भी पाणिनि के समान ही है वे शतृ प्रत्यय में श् अनुबन्ध का विधान र (सार्वधातुक)[33] संज्ञा के लिए करते हैं।

ष् अनुबन्ध

पाणिनि ने षाकन्, ष्ट्रन् इत्यादि प्रत्ययों में ष् अनुबन्ध माना है। जिसका प्रयोजन षिदन्त प्रत्ययों से ङीप्[34] का विधान करना है मुग्धबोध के कृत् प्रत्ययों में प्राप्त इस अनुबन्ध का प्रयोजन पाणिनि के समान षित् प्रत्ययान्त से स्त्रीत्व विवक्षा में ईप् प्रत्यय निर्देश करना है। इस प्रकार पाणिनि और वोपदेव अनुबन्धकरण में अनेक स्थानों पर समानता का प्रतिपादन करते हैं।

काणादं पाणिनीयं च सर्वशास्त्रोपकारकम्

इस उक्ति के अनुसार पाणिनीय शास्त्र सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय का अत्यन्त उपकारक ग्रंथ है। संस्कृत भाषा का जितना व्यवस्थित और वैज्ञानिक रीति से वर्णन अष्टाध्यायी में प्रस्तुत है उतना ऊँच किसी व्याकरण ग्रंथ में मिलना असंभव है पाणिनि की ही अष्टाध्यायी से प्रेरणा लेकर पाणिनि परवर्ती काल में युगानुकूल भाषा में आए परिवत्रनों को व्याकरण के माध्यम से व्यवस्थित है साधुत्व प्रतिपादन हेतु अनेक व्याकरणों की रचना की गई जिनमें मुग्धबोध अत्यन्त संक्षिप्त एवं सरल शैली में लिखा गया बहुत

---

20 पा.अ. – 6/1/163
21 मु. – चि यं व्यम् (94)
22 मु. – ञिणत्यन्त्येजुङटो (517)
23 मु. – 257
24 पा.अ. – टिड्ढा...। (4/1/15)
25 पा.अ. – टेः। (6/4/143)
26 मु. – टेर्लोपो डिति। (126)
27 मु. – ञ्णत्यन्त्येजुङुतो। (377)
28 मु. – आत् (106), इत् (173), उत् (173), अत् (525)
29 ञ्नित्यादिर्नित्म् – 6/1/197
30 मु. – स्वस्य तन् पिति। (982)
31 मु. – 17
32 पा.अ. – तिङ्शित् सार्वधातुकम् (3/4/113)
33 मु. – पञ्चरः शिच्च (530)
34 पा.अ. – षिद्गौरादिभ्यश्च। (4/1/4)

महत्त्वपूर्ण व्याकरण है। उनकी अनुबन्ध शैली पाणिनि से प्रभावित होते हुए भी मौलिकता का पूर्णता प्रतिपादन करती है।

पाणिनि द्वारा एक साथ इत्संज्ञा संबंधी सूत्रों का विधान कर तत्पश्चात् उनके लोप की व्यवस्था की परन्तु वोपदेव ने सभी इत्संज्ञक वर्णों का निर्देश वृत्ति में ही किया है संक्षिप्तता पर विशेष अवधान देते हुए पृथक् सूत्रों की रचना नहीं की। इस प्रकार भाषा के परिवर्तन एवं परिवर्धनों को समाहित करते हुए भी वोपदेव ने भाषा की व्यवस्था को अत्यंत संक्षिप्त रूप में अपने व्याकरण में दर्शाया है।

इस प्रकार लघु तथा सरल शैली में रचित मुग्धबोध व्याकरण का कृत् प्रत्यय प्रकरण पाणिनि से प्रभावित होते हुए भी मौलिकता का प्रतिपादन करता है। वोपदेव ने संक्षेपीकरण एवं सरलता को ध्येय रखते हुए प्रत्ययों के आदिष्ट रूपों को यथा ण्वुल् के स्थान पर अक् तथा ल्युट् के स्थान पर अन् इत्यादि को स्वतंत्र प्रत्यय के रूप में दर्शाया है। अनेक सूत्रों में वर्णित क्षेत्रों को एक ही सूत्र में परिगणित करने तथा वार्तिकों का भी सूत्रों में अन्तर्भाव करते हुए अपने व्याकरण को पूर्ण एवं प्रभावी बनाने का अत्यंत उत्कृष्ट प्रयास किया है।

सन्दर्भ

1. अग्रवाल वासुदेव शरण, पाणिनि कालीन भारत वर्ष, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, द्वि सं 1969
2. अवस्थी शिव शंकर, वाक्यपदीयम्, चौखंबा विद्याभवन वाराणसी, 2001
3. ईश्वर चंद्र, अष्टाध्यायी – भाग 1,चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली प्र सं 2004
4. उपाध्याय बलदेव, संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा संस्थान वाराणसी, प्र सं 1989
5. कुमार अवनींद्र, व्याकरण महाभाष्य, (प्रथम द्वितीयाह्निक),साहित्य भंडार, मेरठ, 2000
6. ग्रोवर शन्नो, बोपदेव का संस्कृत व्याकरण शास्त्र को योगदान, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1996
7. भट्टाचार्य जीवानंद विद्यासागर, मुग्धबोध व्याकरणम्,चौखंबा विद्याभवन वाराणसी, 1994
8. मीमांसक युधिष्ठिर, संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास– भाग 1,रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, संवत 2030
9. वेदालंकार रघुवीर,काशिका सूत्रवृत्तिः, (प्रथम भाग), चौखंबा पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र.सं. 2006
10. Belvelkar S-K-] System of Sanskrit Grammar] Bhartiya Vidya Prakashan] IInd Ed-1976-